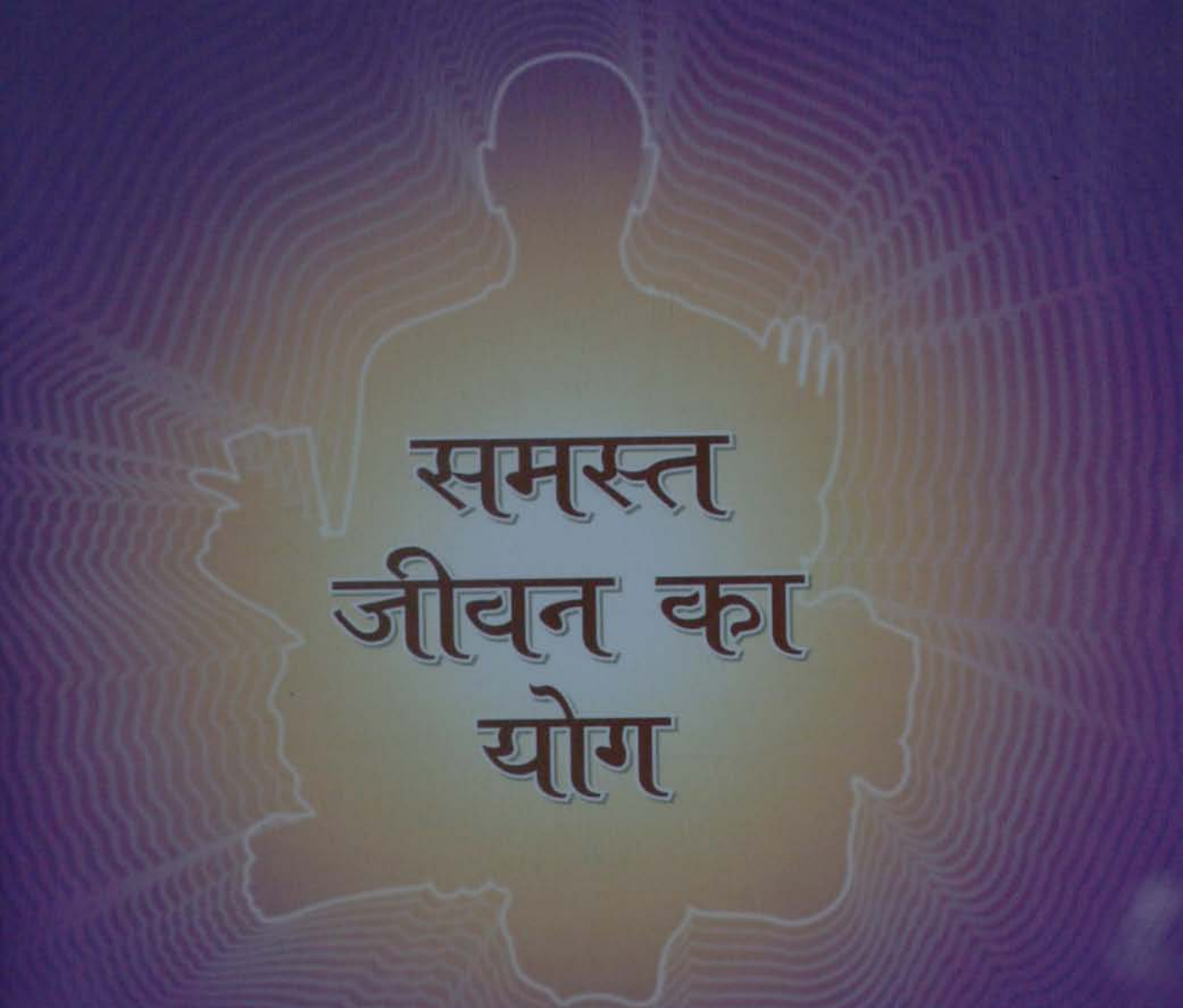

समस्त जीवन का योग

लेखन - संकलन : अ. मु. प. पू. श्री नारायणभाई गी. ठक्कर

सर्वजीवहितावह ग्रंथमाला - ६७

संस्थापक : अ.मु.प.पू. श्री नारायणभाई गी. ठक्कर
श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन
अमदावाद - १३

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन क्यों ?

श्री स्वामिनारायण भगवान के सर्वजीवहितावह संदेश अनुसार मानव जाति के श्रेय एवं प्रेय के लिये-

(क) सेवा - सदाव्रत के आदर्शानुसार बिना भेदभाव के आर्थिक मुसीबत का अनुभव करते भाईबहनों को आवश्यक सहायता पहुँचाना;

(ख) आरोग्य प्रसार की मार्गदर्शक व्यवस्था तथा रोगोपचार के परिचर्या केन्द्र-औषधालय की स्थापना-चलाना, अथवा ऐसा कार्य करती संस्था को सहायता करना;

(ग) आत्मिक शांति तथा मानवता को प्रसारित करते मंदिर, सत्पुरूष के स्मारक केन्द्र आदि का निर्माण-निर्वाह-विकास करना;

(घ) जीवन रचना में उपयोगी साहित्य एवं कला के विकास कार्य को प्रोत्साहित करना;

(च) सम्यक् अभ्यास के लिये पुस्तकालय, संग्रहालय, संशोधन केन्द्र की स्थापना - चलाना अगर ऐसे ईकाई को सहायता देना;

(छ) सर्व समन्वय स्थापित हो ऐसे सांसारिक एवं तत्त्वज्ञानविषयक प्रकाशन प्रसिद्ध करना तथा उनके द्वारा जनसमुदाय का ऊर्ध्वगामी विकास में सहायक होना;

एवं इस प्रकार :

(१) सामाजिक जीवन के आधार तुल्य सदाचार तथा नीति की कक्षा बलवान हो ऐसी प्रवृत्ति का आयोजन करना;

(२) समाज में ऐक्य एकता तथा आपसी सहृद्भाव वृद्धित हो, विश्वबंधुत्व की भावना का विकास हो एवं विसंवादिता दूर हो ऐसे कार्यक्रम देना;

(३) विश्व के धर्म तथा पक्षो के बीच संवादिता का जतन हो इसके लिये सर्वधर्मीय परिषद का आयोजन करते हुए आध्यात्मिक एवं सामाजिक उत्कर्ष को गति देना;

ऐसे सुआयोजित कार्यक्रम तथा प्रवृत्ति द्वारा परिपूर्ण भगवत्स्वरूप की प्राप्ति की ओर मानव समुदाय सर्वांगी विकास का प्राप्ति कर गतिमान हो, ऐसा मिशन का शुभ आशय है।

।। श्री स्वामिनारायणो विजयतेतराम् ।।

समस्त जीवन का योग

सर्वजीवहितावह ग्रंथमाला

६७

: संस्थापक :

• अ. मु. प. पू. श्री नारायणभाई गी. ठक्कर •

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन
अहमदाबाद-१३

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन

सर्वजीवहितावह ग्रंथमाला

❁ प्रकाशन समिति ❁

: प्रेरक - मार्गदर्शक :

❁ अ. मु. प. पू. श्री नारायणभाई गी. ठक्कर ❁

©श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन, अहमदाबाद

(रजि. नं. ई/४५४६/अहमदाबाद : १९८१)

इन्कमटेक्स एक्षेम्पशन u/s 80(G)5

प्रथम संस्करण

प्रतियाँ : १०००

२००७, १६, फरवरी

सं. २०६३, महा वद चौदश

सेवा मूल्य : रु.१०/-

प्रकाशक

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन

८, सर्वमंगल सोसायटी, पूज्यश्री नारायणभाई मार्ग

नारणपूरा, अहमदाबाद - ३८००१३ ✆ : २७६८२१२०

मुद्रक

भगवती ओफसेट

बारडोलपूरा, अहमदाबाद

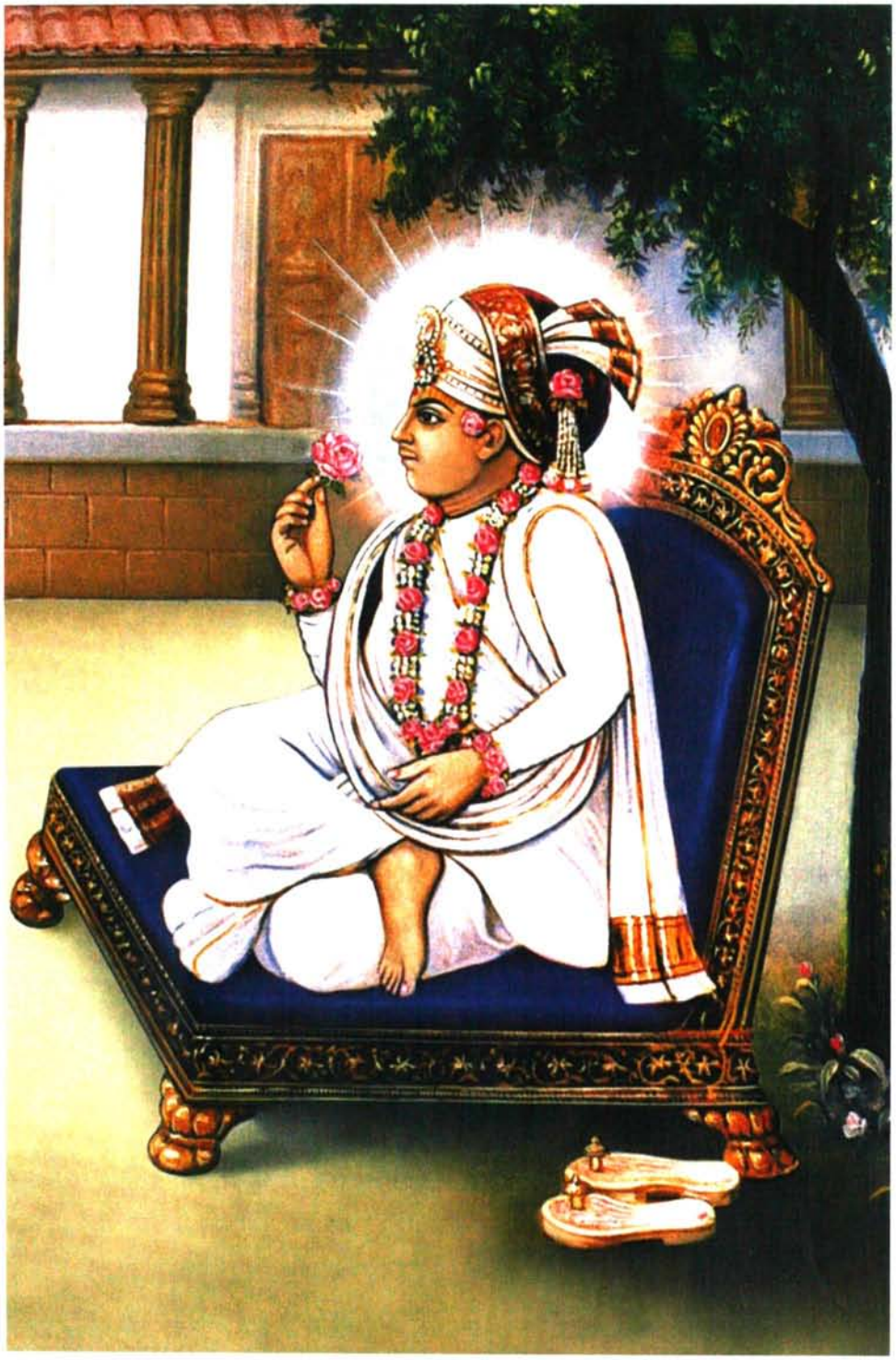

सर्वोपरि उपास्य मूर्ति

पूर्ण पुरुषोत्तम श्री स्वामिनारायण भगवान

अर्पण

अनंतकोटि मुक्त के
स्वामी एवं सदा साकार
दिव्य मूर्ति ऐसे परम कृपालु
श्री स्वामिनारायण भगवान के
गूढ़ रहस्य ज्ञान को समझाने वाले,
महाप्रभु के सुखनिधि स्वरूप की सर्वोपरिता
सर्वत्र प्रवर्तित करने वाले तथा अनादिमुक्त की
सर्वोत्तम स्थिति का अनुभव करवाने वाले
-इस प्रकार समग्र सत्संग और मानव कुल
पर महद् उपकार करने वाले परम कृपालु
अनादि महामुक्तराज़
प. पू. श्री अबजीबापाश्री के
चरणकमलों में सादर समर्पित

●

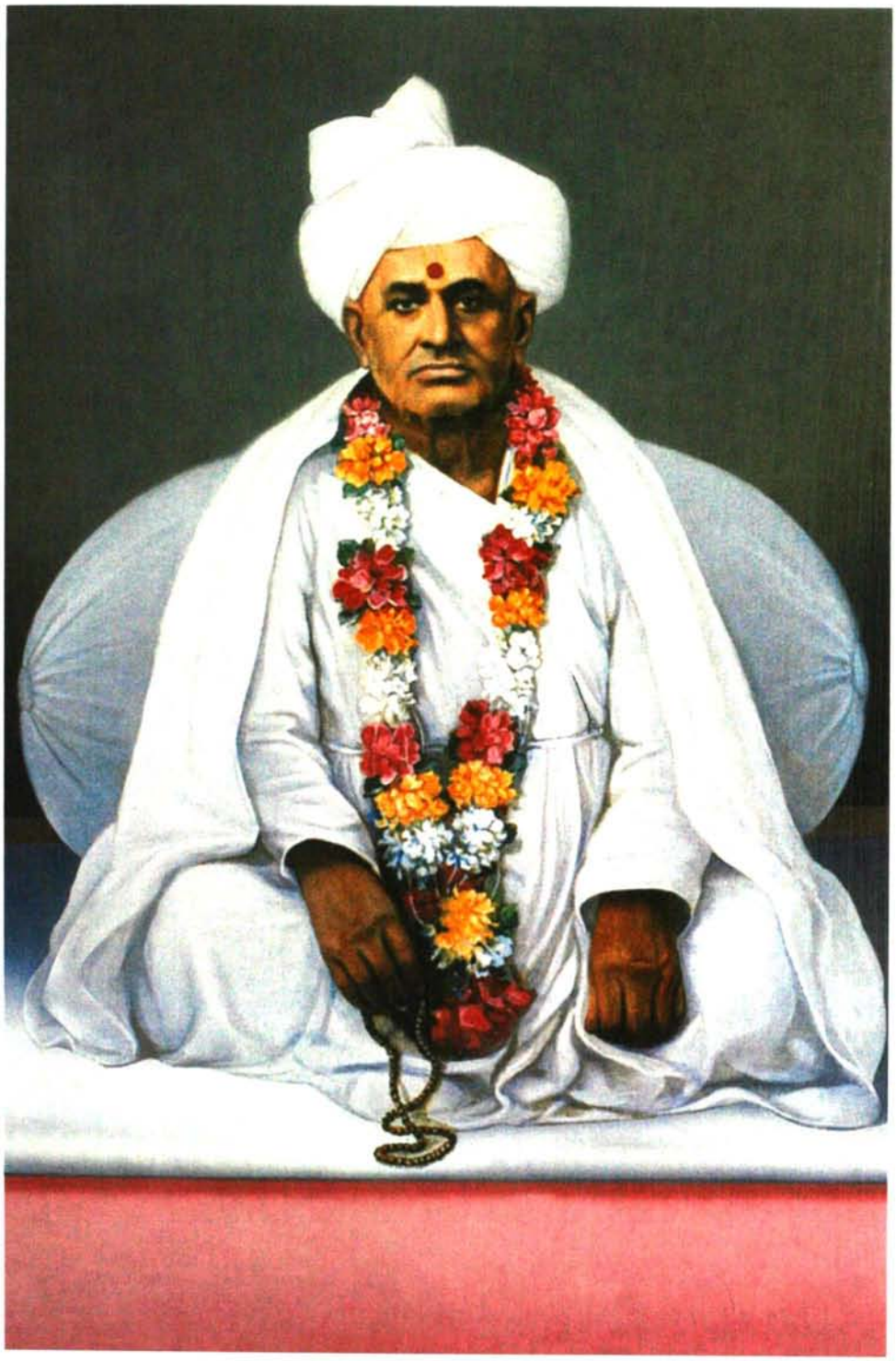

रहस्यज्ञान प्रदाता

अनादि महामुक्तराज श्री अबजीबापा

अर्घ्य

श्रीजीमहाराज़ तथा बापाश्री के
सर्वोपरि तत्वज्ञान को वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत
कर आध्यात्मिक, सामाजिक तथा शिक्षा क्षेत्र में
अद्वितिय योगदान देने वाले, धर्मशुद्धि, संचालनशुद्धि एवं
चारित्र्यशुद्धि प्रखर हिमायती तथा चैतन्य का उर्ध्वीकरण
करने रूपी ब्रह्मयज्ञ की आहलेक जगाने सर्वजीवहितावह
संस्था **श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन** की
स्थापना करने वाले करूणा मूर्ति सद्‌गुरूवर्य
अनादि मुक्तराज़ पूज्य श्री नारायणभाई के
चरण कमल में शतकोटि वंदन

संस्थापक

अनादि मुक्तराज

पूज्यश्री नारायणभाई गीगाभाई ठक्कर

संपादकीय विशेष

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन ऐसी ग्रंथ श्रेणी प्रकाशित-संपादित करने को उत्सुक है, जो समग्र मानव जाति के लिये कल्याणकारी हो एवं जिसके पठन से भारतीय संस्कृति का उच्चत्तम उद्देश्य सार्थक होता हो।

वर्तमान बुद्धियुग में उच्च शिक्षा का विस्तार प्रतिदिन बढ़ रहा है। उच्च शिक्षा मूल उद्देश्य जीवन में उच्चतर मूल्य प्रस्थापित करना है, जीवन का सर्वोच्च मूल्य परमात्मा के परम सुख की अनुभूति में स्थित है। इन उद्देश्यों की ओर पथदर्शित करने में यह ग्रंथ श्रेणी सहायक होगी ऐसी अपेक्षा है।

शिक्षा, विज्ञान एवं यंत्रविद्या के अविरत बढ़ते हुए व्याप को हमें इस प्रकार ढालना है कि केवल भौतिक सुख की प्राप्ति का साधन न बनकर, मानव के आंतरिक विकास में उच्चत्तम सहायक हो; साथ ही हमें ऐसी समझ का प्रसार करना है कि उत्क्रांति का अंतिम लक्ष्य उत्तरोत्तर विकसित होकर परमात्मा के दिव्य सुख में सम्मिलित होने में है।

दिव्यानंद की प्राप्ति के लिये अविरत विकसित होने की प्राकृतिक अंतःप्रेरणा मानव को ईश्वर द्वारा दिया गया अनमोल उपहार है। यह ऐसा सूचित करता है कि हम सब साथ मिलकर ऐसी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थिति का निर्माण करें, जिससे जीवन के उर्ध्वीकरण की प्रक्रिया निर्बाध रूप से पूर्णतः पल्लवित हो। इस कार्य को गति प्राप्त हो ऐसे प्रेरणादायी साहित्य का सर्जन करना आवश्यक है।

मानव जाति के आध्यात्मिक एवं सामाजिक श्रेय के हेतु श्री स्वामिनारायण भगवान ने, जीवन को अविरत ऊर्ध्व

बनाकर, आत्यंतिक दिव्य सुख की प्राप्ति हो ऐसा समन्वयकारी ज्ञानमार्ग प्रस्थापित किया है; उनकी श्रीमुखवाणी वचनामृत तथा शिक्षापत्री में इस तत्त्व ज्ञान की गहनता अनन्य है एवं सविस्तार सरल भाषा में प्रस्तुत है। इसके अतिरिक्त स्वयं के ब्रह्मनिष्ठ संत एवं गृहस्थ मुक्तपुरूष द्वारा सर्वहितावह साहित्य भी विपुल मात्रा में सज्जित करवाया है।

उपर्युक्त ग्रंथो में सर्वग्राह्य भारतीय संस्कृति तथा जीवन जीने की वास्तविक दिशा दर्शित की गई है। अतः इस ग्रंथ श्रेणी में सर्वजन पूरब के हो या पश्चिम के, सभी को दिव्यता की ओर अग्रसर होने में पथदर्शक हो, ऐसे आदर्श तथा ज्ञान को अर्वाचीन ज्ञान के प्रकाश में प्रस्तुत करने का उत्तम प्रयत्न किया जायेगा। हमें विश्वास है कि इससे मानव जीवन में संवादिता आयेगी एवं आधुनिक जीवन की विषमता क्रमशः कम होते हुए दूर हो जायेगी।

भारत या विश्व के अन्य साहित्य जिसमें दर्शित विचार हमारे उद्देश्य के साथ सुसंगत होंगे, उन्हे भी इस ग्रंथ श्रेणी में सम्मिलित किया जायेगा।

हमारी ईच्छा यह है कि इस ग्रंथ श्रेणी के पुस्तक केवल गुजराती भाषा में ही नहीं, अपितु हिंदी, अंग्रेजी आदि भाषा में भी प्रकाशित करें, जिससे अन्य भाषी पाठक भी इस ग्रंथ श्रेणी से लाभांवित हो।

मिशन की इस प्रवृत्ति की सफलता प्राप्ति में सभी का सहकार प्राप्त हो एवं मिशन के सर्व कार्य में सदैव प्रभु कृपा संलग्न हो, यही अभ्यर्थना।

दासानुदास

नारायणभाई गी. ठक्कर

स्थापक प्रमुख

सं. २०४२, श्रीहरि जयंती

अप्रैल १८, १९८६

आमुख

जो सर्वोपरि परमतत्त्व अनेक ब्रह्मांडो की उत्पत्ति नियमन एवं प्रलयकर्ता हैं उन्हें हम भगवान, परमात्मा वा परमेश्वर कहते हैं। इस हकीकत का स्वीकार आधुनिक विज्ञान भी करता है। उस परमतत्त्व में संलग्न होना परम योग है। जिसके हेतु कई मार्ग दर्शित किये गये हैं, परंतु वास्तविक, सरल एवं सर्वग्राह्य मार्ग तो स्वयं भगवान या उनके संग एकात्मरूप से संलग्न हुए मुक्त पुरुष ही दर्शित कर सकते हैं। इस कथन की यथार्थता इस पुस्तिका के पठन से सहज ही ज्ञात होगी।

श्री स्वामिनारायण महाप्रभु द्वारा उपदेशित पंचनियम (पंचमहाव्रत) जिसकी समझ इस पुस्तिका में विस्तृतरूप से दी गई है, इसका पालन मात्र प्रभु प्राप्ति ही नहीं किंतु हरेक व्यक्ति एवं समाज के सर्वोत्तम निर्माण हेतु तथा जगत के सामान्य सुख-शांति हेतु अनिवार्य है। अगर यह समझ में आए तो श्रीहरि के सर्वजीवहितावह आदेशों का पालन-प्रवर्तन सर्वत्र हो जाए, यह हरेक मनुष्य का परम कर्तव्य होना चाहिए। अगर हरेक मानवी के जीवन में ताने-बाने की सदृश बुन जाए तो वर्तमानकाल में प्रवर्तित अशांति एवं अव्यवस्था

दूर हो कर, सर्वत्र शांति एवं व्यवस्था प्रस्थापित हो जाएगी, ऐसा इस पुस्तिका के पठनोपरांत अवश्य ही लगेगा।

सर्वोच्च परमपद की प्राप्ति एवं मानवी का सुमेल उभय की प्राप्ति साथ-साथ हो ऐसा सरल मार्ग क्यों न अपनायें? जिससे इस राह पर चलकर विश्व में निवासित सर्व मनुष्य परस्पर के सहयोग द्वारा विकास करे, ऐसी श्रद्धा सहित यह पुस्तिका प्रकाशित करते हैं।

अंततः श्री स्वामिनारायण भगवान के प्राकट्य के दिन ही यह पुस्तिका प्रकट होती है यह एक सुभग अवसर है। आशा है, अधिकाधिक लोग इससे लाभांवित होंगे एवं निज जीवन में आध्यात्मिक उन्नति प्रज्वलितकर अपार्थिव शांति का अनुभव करेंगे-करवायेंगे।

सं. २०६३, महा वद चौदश
ई. स. २००७, १६ फरवरी

प्रकाशन समिति
श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन
अमदावाद

समस्त जीवन
का
योग

समस्त जीवन का योग

परमात्मा एकमेव एक ही हैं

वैविध्यपूर्ण इस वैज्ञानिक युग में प्रत्येक मनुष्य निज जीवन में अधिकाधिक सुख प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील रहता है; दिन-रात महेनत करता है, परंतु प्राप्त करने योग्य सर्वश्रेष्ठ एवं शाश्वत सुख तो केवल परमात्मा के स्वरूप में ही विद्यमान है, जिसकी प्राप्ति उपरांत कुछ शेष नहीं रहता। वे परमात्मा सर्वव्यापक एवं अपार हैं, वे एक ही हो सकते हैं। अगर वे दो होते तो एक-दूसरे को सीमित करते, उभय मर्यादित हो जाते। वे सर्वोपरि परमात्मा ही सर्व को सुख, ऐश्वर्य एवं सामर्थ्य के प्रदाता हैं। सर्व कारण के कारण, सर्वावतारी, सर्वकर्ता, सदैव दिव्य साकारमूर्ति एकमेव एक ही परमात्मा हैं। जिनकी हम सर्वोपरी भगवान श्री स्वामिनारायण स्वरूप से उपासना करते हैं।

प्रभु दर्शन का राजमार्ग

संवत १८३७ की साल थी। उस समय व्याप्त अज्ञानरूप तिमिर का लय कर, अनंत जीवो को निज

दिव्य सुख की प्राप्ति करवाने के हेतु उत्तर प्रदेश के छोटे से ग्राम श्री छपैयापुर में श्री स्वामिनारायण महाप्रभु प्रकट हुए। उस समय में जब कि, संदेश-व्यवहार एवं परिवहन सीमित थे उस समय भगवान श्री स्वामिनारायण ने २५ से २७ वर्ष के अल्प समय में लाखों मनुष्य को निज स्वरूप का ज्ञान प्रदानकर स्वयं के अनन्य आश्रित बनाये। सभी को निज के सर्वोपरि पुरुषोत्तम स्वरूप के सुख का अनुभव हो उसके हेतु आवश्यक पात्रता प्राप्ति हेतु उन्होंने आंतर-बाह्य शुद्धि का सरल, परंतु पूर्ण मार्ग दर्शित किया; यह हैं उनके सर्वजीवहितावह पंचनियम (पंचमहाव्रत) का यथार्थ पालन।

सर्वोपरि महाप्रभु के दिव्य स्वरूप में जिनकी अलौकिक स्थिति हुई हो, ऐसे अनुभवी सिद्धमुक्त को पहचानकर उनके योग द्वारा उन पंचनियम के स्थूल तथा सूक्ष्म अर्थ को समझकर, उनके कथनानुसार अमल करें तो जिसे करना-पाना है उसकी प्राप्ति को देर नहीं लगती। यही प्रभुदर्शन का राजमार्ग है। यह लघु पुस्तिका इस दिशा में मार्गदर्शनरूप होगी।

पंच नियम

अब वह पंच नियम को क्रमशः विस्तापूर्वक समझें :

प्रथम नियम : दारू त्याग

तन-मन-इंद्रियों को नशा करवाकर प्रभु की राह

से चलित करे वे सर्व दारू है। विभिन्न प्रकार की मदिरा तथा चाय, कॉफी, सिगारेट, बीडी, तम्बाकु, अफीन, गाँजा, भंग आदि मादक पदार्थ एक या अन्य प्रकार के दारू ही हैं। ये सर्व पदार्थ शरीर के स्वास्थ्य को निम्नाधिक रूप से हानिकर्ता हैं, कई बार प्राणनाशक होने के कारण सदैव त्याग करें। दस इंद्रियाँ अर्थात् पांच कर्मेन्द्रियाँ (वाक, हस्त, पैर, गुदा एवं प्रजनेन्द्रिय) पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (नेत्र, श्रोत्र, रसना, घ्राण एवं त्वचा) को नशा करवाकर ईश्वरप्राप्ति के विवेक के संधान को चलित कर दे वे सर्व दारू हैं। दृष्टिगोचर न करने योग्य वस्तुओं के प्रति आकर्षण हो, उस पर दृष्टिपात करने का प्रलोभन हो वह नेत्र का दारू है। व्यर्थ ग्राम्यवार्ता या किसी की निंदा-टीका करना या किसी को गाली देना यह वाणी की मदिरा है। किसी व्यक्ति की निंदाजनक बाते श्रवण करना, न श्रवण करने योग्य गीत वा वार्ता का श्रवण करना, ये सर्व श्रोत्र का दारू है, रजोगुणी तथा तमोगुणी वृत्ति उत्पन्न करनेवाले अतिशय खट्टे, नमकीन, तीख, मीठे स्वादिष्ट पदार्थ खाने की इच्छा होना रसना इंद्रिय का दारू है। भगवान के संबंध के बिना रजोगुणी सुगंधित इत्तर-तेल इत्यादि द्रव्यों के उपयोग की आदत होना घ्राणेन्द्रिय का दारू है। भगवान के अतिरिक्त जगत संबंधित व्यर्थ विचार या विचार-संकल्प का चिंतन-मनन करना यह मन का दारू है। परस्त्री का संग, जुआ, शिकार करना, मदिरापान, नृत्य-संगीत-साज की आदत,

व्यर्थाटन, निंदा तथा दिन की निद्रा - ये दस व्यसन हमारी वृत्ति को भगवद्स्वरूप में संलग्नित करने में बाधक हैं। रजोगुणी एवं तमोगुणी जीवन भी मदिरा सदृश है। मन-इंद्रियों को पंचविषय रूप नशा करवाये वे सभी दारू के भिन्न-भिन्न प्रकार हैं, जिनका स्वेच्छा से समझदारीपूर्वक त्याग, प्रथम वर्तमान है।

द्वितीय नियम : आमिष (हिंसा) का त्याग

आमिष त्याग अर्थात् मात्र सामिषाहार का ही त्याग नहीं, परंतु आंतर-बाह्य आहारशुद्धि का जतन है। आमिष के त्याग में मन-कर्म-वचन द्वारा हिंसा का संपूर्ण त्याग समाविष्ट हो जाता है। बिना स्वच्छ किये, जंतुयुक्त अनाज, फल, मेवे आदि पदार्थ तथा जंतुयुक्त बिना छने जल-दूध-तेल-घी इत्यादि तरल पदार्थ का उपयोग एक प्रकार का सामिषाहार है। वे सर्व पदार्थ जीव-जंतु रहित हो ऐसे स्वच्छकर ही प्रयोग करें। बाजार की अनाज चक्की का प्रयोग इच्छनीय नहीं है, अगर संभव हो तो आर्थिक अनुकुलताकर घर में चक्की बसा लें, उसका प्रयोग करें। आपत्तिकाल के सिवा शंकाशील औषध कभी न प्रयोग करें। मांस के संसर्गवाले वा अशुद्ध बाहरी खाद्य पदार्थ का कदापि प्रयोग न करें। किसी को दुभाकर, छलकर अन्याय द्वारा प्राप्त धन द्वारा खरीदा हुआ अन्न आमिष तुल्य ही है उसका ग्रहण न करें। आंतर-बाह्य शुद्धि के नियमानुसार निर्मित भोजन का थाल भगवान

को अर्पण करें, महाप्रभु की स्मृति सहित भोजन करें यही वास्तविक रूप से आमिष का त्याग कहा जाता है।

अब आमिष के सूक्ष्म स्वरूप की विचारणा करें। किसी को हानि पहुँचाना, दुभाना, क्रोध करना भी आमिष है। निज स्वार्थ हेतु अन्य को पीडाकारी होना हिंसा है। ईर्ष्या-द्वेष मिथ्या भाषण या किसी के प्रति बुरा संकल्प करना, शक्ति मर्यादा से अधिक परिश्रम करना ये सभी हिंसा के विभिन्न प्रकार ही हैं। इस प्रकार स्थूल तथा सूक्ष्म सर्व प्रकार की हिंसा का त्याग अर्थात् अहिंसा का पालन द्वितीय नियम है।

तृतीय नियम : चोरी का त्याग

किसी भी पदार्थ फल-फूल, धन-जमीन आदि के स्वामी की आज्ञा बिना लेना चोरी है। किसी को दुभाकर या युक्तिपूर्वक या जबरदस्ती उससे छीन लेना चोरी है। स्वयं की आय तथा प्राप्त समय में से प्रभु को अर्पण करने का हिस्सा (धर्मदान) न निकालना भी चोरी है। किसी का विश्वासघात करना भी चोरी है। नौकरी-व्यवसाय में स्वयं के कर्तव्य-जिम्मेदारी ईमानदारीपूर्वक न करना भी चोरी है। स्वयं के उद्देश्य हेतु महान पुरुष के नाम का दुरुपयोग करना भी चोरी है। किसी ने प्रेमभाव या महिमा सहित दिया पदार्थ भेंट, आसक्ति या लोभवृत्ति से स्वीकारना भी नियम

का लोप है। इस प्रकार मन-कर्म-वचन द्वारा सर्व प्रकार से स्थूल-सूक्ष्म चोरी जाने-अनजाने भी न हो जाए उसके हेतु जागृति रखें यह तृतीय नियम है।

चतुर्थ नियम : व्यभिचार त्याग

व्यभिचार त्याग अर्थात् मन-कर्म-वचन द्वारा व्यभिचार का त्याग-परस्त्री पुरुष के अनिष्ट व्यवहार का त्याग अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन चौथा नियम है। परमेश्वर के स्वरूप में चर्या ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य की ऐसी स्थिति को प्राप्त पुरुष को स्त्री का तथा स्त्री को पुरुष का आकर्षण टल जाता है। इंद्रियो की विषयासक्त वृत्ति का जाने-अनजाने स्थूल या सूक्ष्म रीति से निग्रह न होकर जागृत या स्वप्न अवस्था में ब्रह्मचर्यव्रत का भंग हो जाए वह व्यभिचार है। मन में उद्‌भवित होती काम वृत्ति को बलात् दबा देने से मनोवैज्ञानिक विकृति या अन्य कमजोरी उत्पन्न होती है, परंतु ज्ञान-ध्यान-उपासना, सद्‌प्रवृत्ति, सद्‌वाचन तथा सत्पुरुष की सेवा-समागम द्वारा उन विकारी वृत्ति का सात्विक वृत्ति में रूपांतर कर, उसका उर्ध्वीकरण करने से सर्वोपरि प्रभु के स्वरूप का साक्षात्कार करने की पात्रता आती है। अतिरेक का त्यागकर जप, तप, देहदमन, पूजा-पाठ, स्वाध्याय, सेवा-भक्ति आदि करना, यह सभी पात्रता तथा निष्काम नियम की दृढता हेतु ही हैं। संतान की आवश्यकता न हो तो गृहस्थाश्रमी ब्रह्मचर्य नियम का पालन कर, भगवान के भजन-भक्ति तथा

सेवा के कार्य में संलग्न हों। त्यागी-गृही, स्त्री-पुरुष स्वयं के धर्म-नियम-मर्यादा में सावधानी पूर्वक प्रभु के स्वरूप में ओतप्रोत होकर संलग्न होने का नित्य अभ्यास रखें। ब्रह्मानंदस्वामी ने कहा है कि 'रसबस (ओतप्रोत) होई रही रसिया संग, ज्यूं मिसरी पय माही मिली' कृपासाध्य प्रभु की कृपा से सदैव इस स्थिति में वर्तन हो तब 'चौथे नियम' का संपूर्ण पालन हुआ माना जाए।

पंचम् नियम : दुषित न होना तथा न करना

'दुषित न होना तथा न करना' अर्थात् वाणी, विचार तथा वर्तन की आंतर-बाह्य शुद्धि का जतन करना-करवाना। जिसकी क्रिया अशुद्ध हो, जो स्वच्छता के आवश्यक नियम का पालन न करते हों, जिनके आहार-विहार अनिच्छनीय तथा अशुद्ध हों अर्थात् जो मांसाहारी, दारू का व्यसनी तथा चरित्रहीन हों, जो भगवद् आज्ञा का लोप करते हों ऐसे सर्व मनुष्य के हाथ के अन्नजल ग्रहण न करें। अनिवार्य संजोग के सिवा ऐसे मनुष्य के स्पर्श का त्याग करें, अगर करना पडे अथवा हो जाए तो घर आकर शुद्धि हेतु स्नान करें। बहनों को हर माह ऋतुकाल प्राकृतिक रूप से होता है शारीरिक शास्त्र के अनुसार रजस्त्राव की अशुद्धि तीन दिन तक रहती है। ऋतुस्त्राव के उपरांत चौथे दिन स्नानकर शुद्धि होती है। उस समय में आराम एवं संयम अति आवश्यक है। इन सभी

दृष्टि से रजस्वला बहन स्वेच्छा से तीन दिन घर में कहीं स्पर्श न करें। रजोदर्शन के पालन का इस नियम में समावेश होता है। हमारा अशुद्ध वर्तन हमारे संपर्क में आनेवाले व्यक्ति के तनमन को दूषित किये बिना नहीं रहता। अतः स्वयं हमारे तथा अन्य के हित में हमारा वर्तन तथा हमारी वाणी निर्मल, सत्यमय तथा अनुकरणीय होनी चाहिये। यह बात हमें पाँचवा नियम आग्रहपूर्वक सिखाती है।

इस प्रकार पंचनियम मानवजीवन के हरेक क्षेत्र में तथा समाज के रोम-रोम में प्रवेश करने आवश्यक हैं। यह आदर्श प्रत्येक मनुष्य का खुद स्वभाव होना चाहिये। इस प्रकार हम पंच नियम हेतु जब विश्वव्यापी आध्यात्मिक दृष्टि से विचार करेंगे तब वह इस समय से अनेक गुना अधिक कल्याणकारी बनेगा।

एक बात स्मरण में रहे कि पाँचो नियम एकदूसरे के संग संकलित होने के कारण एक के आंशिक लोप से अन्य नियम का न्यूनाधिक अंश लोप होता है। अतएव अविरत रूप से जीवन निर्माण नहीं होता एवं सर्वोच्च ध्येय की प्राप्ति संभवित नहीं होती। अतः पाँचो नियम का पूर्णतः पालन हो यह अत्यंत आवश्यक है।

उपर्युक्त पंचनियम में संयोगानुसार कोई फर्क हो तो आत्मनिरीक्षण कर, महान पुरुष का मार्गदर्शन प्राप्तकर दोषमुक्त हों, फलतः परमपद की प्राप्ति के हेतु आंतरशुद्धि की वृद्धि होती रहे।

अ. मु. प. पू. श्री नारायणभाई ने उपर्युक्त
मुद्दे अनादि महामुक्तराज श्री अबजीबापाश्री के
सार्ध शताब्दी महोत्सव के अवसर पर लीखें हैं,
परंतु यह परम कृपालु बापाश्री तथा पूर्ण मुक्त
स्थिति वाले अन्य सभी अनादि मुक्त के
प्राकट्य महोत्सव को लागु हो सकते हैं
अतएव व्यक्तिगत चेतना की ऊर्ध्वगति
के हेतु समग्र जीवन के योग के अंश
के रूप में आवश्यक है।

अनादिमुक्त की
सार्ध शताब्दी का उत्सव क्यों?

अनादिमुक्त का प्राकट्य अनंत जीवों को श्रीहरि के दिव्यसुख की प्राप्ति के हेतु भगवान श्री स्वामिनारायण के मात्र संकल्प से होता है। सर्वोत्तम उद्धार के उस आदर्शानुसार, अनादि महामुक्त श्री अबजीबापाश्री कच्छ भूमि पर भूज से १८ कि.मी. दूर स्थित तथा महाप्रभु के पावन चरण से आठ बार अंकित हुए श्री बलदिया (श्री वृषपुर) ग्राम में संवत १९०१ के कार्तिक शुकल प्रबोधिनी एकादशी के दिन प्रकट हुए। उन्होंने आत्यंतिक मोक्षरूप अनादिमुक्त की सर्वोच्च स्थिति की लक्ष्यार्थ समझ करवायी, अनेक संत-हरिभक्तों को श्रीहरि के परमपद के अधिकारी बनाकर, मूर्ति के सुखभोक्ता कर दिये थे। उन्होंने सर्वोपरि आदर्श तत्त्वज्ञान से भरपूर ग्रंथ 'श्री वचनामृतम्' पर प्रश्नोत्तर रूप से सरल भाषा में समझ प्रदान करती हुई श्रेष्ठ मार्गदर्शिका सदश 'रहस्यार्थ प्रदीपिका टीका' की रचना रचकर सदा के लिये मोक्ष का मार्ग सरल एवं सुलभ बना दिया है। उनकी दिव्यवाणी 'श्री अबजीबापाश्री की वार्ता भाग १-२' के नाम से प्रकाशित हुई है। उन दोनों भाग में श्रीजीमहाराज की मूर्ति में ओतप्रोत रहने की वार्ता रूप अमृतरस छलकता है। मात्र मूर्ति, मूर्ति एवं मूर्ति ही! इसके अतिरिक्त किसी बात का स्मरण या अध्यापन

बापाश्रीने नहीं रखा। ये दोनों भाग शीतल ज्ञानजल से परिपूर्ण हैं, जिसके पठन से जीव में शीतलता हो जाती है।

स. गु. श्री गोपालानंदस्वामी के शिष्य स. गु. श्री निर्गुणदासजीस्वामी स्वयं के सर्व संत-हरिभक्त को बार-बार कहते थे कि, 'श्री स्वामिनारायण भगवान ने स्वयं का अलौकिक सुख प्रदान करने के हेतु वर्तमान में इस 'अबजीभाई' को भेजा है।' बापाश्री की बेनमुन सादगी, उनके जीवन तथा वर्तन की एकता उनकी आज्ञापालन तथा शिस्त वास्तव में अद्‌भुत थे। बापाश्री के जीवन में पग-पग पर सभी को वेद की ऋचाओं का साक्षात्कार होता; उनकी हरेक क्रिया में अलौकिता का अनुभव हुए बिना नहीं रहता। परम कृपालु श्री अबजीबापाश्री बडे-बडे पारायण-यज्ञ करते उस समय आशीर्वाद देते कि, 'इस यज्ञ में जो उपस्थित रहेगा, जो प्रसाद ग्रहण करेगा, उन सभी का आखरी जन्मकर हम अक्षरधाम में ले जाएंगे' कैसा अद्‌भुत सामर्थ्य! कैसी अद्‌भुत प्राप्ति! अनादिमुक्त की बात ही न्यारी!

अनादिमुक्त की सार्ध शताब्दी अक्षरधाम की अलौकिक प्राप्ति, आखरी जन्म के दुर्लभ आशीर्वाद तथा अमोघ कृपा प्राप्त कर लेने का अनुपम पर्व है। ऐसे पुनित प्रसंग पर श्रीहरि प्रसन्न होकर अपार कृपा वर्षा करते हैं जिससे हमारे अवयव परिवर्तित हो जाते हैं। पंचनियम का यथार्थ पालन कर दृढ विश्वास एवं

महिमा सहित उस कृपा को त्वरित ग्रहण करना यही अनादिमुक्त की सार्ध शताब्दी के उत्सव की फलश्रुति है।

वास्तविक त्यौहार मनाना किसे कहें?

प. पू. बापाश्री के प्राकट्य को संवत २०५० के कार्तिक शुकल एकादशी तारीख : २४-११-१९९३ को १५० वाँ वर्ष लगा, अतः यह सार्ध शताब्दी वर्ष हुआ। महाप्रभु के परमपद की प्राप्ति के हेतु आशीर्वादरूप इस वर्ष को कैसे मनाये इसका विचार करें:

वास्तविक रूप से मनाना उसे ही कहा जाए जो समस्त जीवन को स्पर्श करे। हमारे उर्ध्वीकरण के मार्ग को संपोषित करे, इस प्रकार इस वर्ष को मनाना चाहिए। यह सर्वजीवहितावह ब्रह्म यज्ञ किसी भी जाति की सीमा से पर सर्व मनुष्य के लिये आत्यंतिक मोक्ष का महायज्ञ है।

अनादिमुक्त की दुर्लभ स्थिति की प्राप्ति कराना ही बापाश्री के जीवन का महत्तम उद्देश्य था। उसे आत्मसात् करने हम सभी कटिबद्ध हो जाएँ।

उसके लिए प्रस्तुत है प्रेरणारूप रचनात्मक कार्यक्रम :

(१) **पंचनियम का पालन :** बापाश्री के कथनानुसार 'अगर महाराज के वचन से बाहर हो अर्थात् नियम में फर्क हो तो बडा विमुख कहा जाए।' अतः श्रीहरि के पंचनियम महान मुक्त के योग-

समागम द्वारा समझकर, जीवन के अंगरूप बनाये, शूरवीर होकर सदैव जागृत एवं प्रयत्नशील रहें।

(२) **पूजा-अर्चन** : आत्मिक उन्नति एवं शांति हेतु हररोज श्रीहरि की बाह्य तथा मानसी पूजा परिशिष्ठ में दर्शित अनुसार नियमितरूप से करें।

(३) **दैनिक गृहसभा** : पारिवारिक आंतर-बाह्य विकास हेतु निज परिवार के सर्व सभ्य मिलकर स्वयं के घर में हररोज कम से कम आधा घंटा अगर शक्य हो तो अधिक समय गृहसभा का आयोजन करें। उस सभा के कार्यक्रम में नंद संतो द्वारा रचित श्रीहरि की मूर्ति के तथा ज्ञान-ध्यान-भक्ति से संलग्नित कीर्तन के पदों का गान, वचनामृत आदि ग्रंथ की कथा, विवेचन, नित्यनियम, धून, ध्यान आदि मुद्दे को समय मर्यादा अनुसार समाविष्ट करें।

(४) **कीर्तन मुखपाठ** : परिवार के हरेक सभ्य इस वर्ष दौरान निज पसंद के कम से कम पाँच या अधिक कीर्तन कंठस्थ करें। हररोज चलते-फिरते, उठते-बैठते सर्व क्रिया करते, श्रीहरि के स्वरूप की स्मृति रखकर, तालबद्धरूप से उन कीर्तनों का गान करें। कीर्तन भक्ति से श्रीहरि की मूर्ति अंतःकरण में अंकित हो जाती है।

(५) 'वचनामृतम्' आदि ग्रंथो का अभ्यास :
'वचनामृतम्' श्री स्वामिनारायण भगवान के मुखकमल की दिव्य परावाणी है। बापाश्री के कथनानुसार 'वचनामृत सदृश कोई शास्त्र नहीं है।' वह जीवों के अज्ञानरूप तिमिर का नाशकर, आत्मा-परमात्मा के स्वरूप का साक्षात्कार करवाता है। उनके रटन से श्रीजीमहाराज की मूर्ति के आनंद का अनुभव होता है। वह आनंद अहर्निश विद्यमान हो, उसके हेतु परिवार के सभी सदस्य वचनामृत का पठन-श्रवण समझदारीपूर्वक प्रतिदिन करें। निज पसंदानुसार पाँच या अधिक वचनामृत कंठस्थ करें। सत्संगिजीवन, शिक्षापक्षी-रहस्यार्थ, भक्तचिंतामणी आदि ग्रंथो का भी अभ्यास करें।

(६) थाल-(भोग के हेतु भोजन सामग्री) आरती :
थाल प्रभु के प्रति समर्पण भावना का प्रतीक है आरती के समय आंतरप्रकाशित होकर श्रीहरि का दर्शन अंतर में अंकित होता है, तथा अंतरिक्ष में उपस्थित देव भी प्रभु के दर्शन से लाभांवित होते हैं। प्रत्येक परिवार दिन में सुबह-शाम दो बार श्रीजीमहाराज की मूर्ति को थाल धरायें तथा आरती करें। समय की परवाह न करते हुए थाल-आरती पूर्णतः बोलें। थाल-आरती के समय संभव हो तो परिवार के सर्व सभ्य हाजिर हो सके ऐसा आयोजन करें। थाल-आरती के

पद परिवार के हरेक सभ्य को कंठस्थ हो यह अति आवश्यक है।

(७) **जप :** श्री वृषपुर (कच्छ) बापाश्री की छत्री संस्था, सरसपुर श्री स्वामिनारायण मंदिर, अहमदाबाद तथा श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन, नारणपुरा, अहमदाबाद द्वारा 'श्री स्वामिनारायण' महामंत्र की लेखनपोथीयाँ मुद्रित की गई है। ये उपरोक्त तीनों संस्था से विना मूल्य मिल सकती है। विद्यार्थीयों को छुट्टियों में उत्कृष्ट प्रवृत्ति मिलेगी तथा उससे आंतरिक उर्ध्वरोहण भी होगा। प्रत्येक परिवार कम से कम एक या अधिक महामंत्र की लेखनपोथी लिख सकता है। लिखकर पूर्ण होने पर पोथी उपरोक्त किसी भी स्थान से पावती लेकर लौटा सकते है। उपरांत स. गु. श्री गोपालानंदस्वामी रचित 'लोकमंगल मंत्र' तथा 'जनमंगल स्तोत्र' के जप-पाठ स्थिर आसन पर बैठकर वा अन्य प्रवृत्ति करते हुए कर सकते हैं। 'श्री स्वामिनारायण' नामक मंत्र सभी रोगों की औषधि है; सकल व्याधिहर औषधि है। मंत्रोच्चार से निम्न कोटी के दैवी तत्त्व तथा अंतरिक्ष में निवासित या भूमि पर के दुष्ट तत्त्व भाग जाते हैं।

(८) **माला :** माला श्रीहरि के सर्वोपरी स्वरूप में एकाग्र मन से संलग्न होने का अमोघ साधन है। भगवान के नाम के निम्नलिखित महामंत्र

माला के प्रत्येक मनके में मन में बोलकर नित्य एक वा अधिक माला, श्रीजीमहाराज के दिव्य स्वरूप में स्थिर चित्त से संलग्न होकर घुमानी चाहिये :

१. 'ब्रह्माहम् स्वामिनारायणदासोऽस्मि'

२. श्रीजीमहाराज ने मेरे चैतन्य को कृपाकर मुक्तकर मूर्ति में रखा है। श्रीजीमहाराज ही हैं।

ये दोनों मंत्र अनादिमुक्त की स्थिति की प्राप्ति हेतु हैं।

(९) ध्यान : वासना रहित वर्तन करना एकांतिक भक्त का धर्म है। वासना न हो वह एकांतिक भक्त है। सर्व स्थान से वासना तूटकर एक भगवद् स्वरूप में अचल मति होने का एकमात्र उपाय भगवान की कृपा है; भगवद् स्वरूप का ध्यान है। ध्यान कर्ता पर यह कृपा सहज ही होती है। अतएव श्रीजीमहाराज की मूर्ति नखशिखा पर्यंत चैतन्य में सिद्ध करने के हेतु परिवार का प्रत्येक सभ्य अनुकुलतानुसार ध्यान का अभ्यास प्रतिदिन नियमित रूप से अवश्य ही करें। महान मुक्त द्वारा ध्यान की रीति सिखकर, उसके अनुसार एकाग्र चित्त से ध्यान करें।

ध्यान की रीति के मुद्दें :

१. सर्वप्रथम हरेक ध्यानकर्ता व्यक्ति स्वयं को अति प्रिय तथा ध्यान में आये ऐसी श्री घनश्याम महाप्रभु की बैठी या खडी; खुले शरीर की (मंगला दर्शन की) या

वस्त्र सहित की (श्रृंगार दर्शन की) मूर्ति निज संमुख रखें। उस ध्येय स्वरूप को बदले नहीं।

२. उस मूर्ति को नखशिख अर्थात् चरण से मस्तक पर्यंत एक चित्त से अवलोकन करें।

३. तदुपरांत मूर्ति के मुखारविंद के भाल, भ्रमर, नेत्र, नासिका आदि अंग स्वयं के नेत्र खोल-बंद कर, एकाग्रता से निरीक्षण कर दृढ करें जहाँ तक बहिर्दृष्टि से (खुले नेत्र से) दृष्टिगोचर होते अंग अंतर्दृष्टि से अंतःकरण में वैसे ही हुबहु दृष्टिगोचर हो तब तक धारणा करें।

४. इस प्रकार समग्र मूर्ति अंतर्दृष्टि से निज अंतःकरण में दृढ करें।

५. नेत्रों को बंद करते ही बाहर के सदृश ही हुबहु मूर्ति अंतर्दृष्टि से हंमेशा दृष्टिगोचर होनी चालु रहे तब तक इस प्रकार ध्यान करना चालु रखें।

६. इस प्रकार समग्र रूप से मूर्ति दृढ होने के पश्चात् ज्ञान द्वारा, स्वयं की देह के अस्तित्व को पूर्णतः भुलकर, उसके स्थान पर अधोउर्ध्व तेज के समूह के मध्य में दृढ हुई महाराज की मूर्ति को यथा जीव देह में विद्यमान है, उसी प्रकार मूर्ति में स्थित होकर दृष्टिगोचर करें।

७. उस समय श्रीजीमहाराज ने मेरे चैतन्य को मुक्त बनाकर मूर्ति में स्थित किया है, ऐसी भावना कर, मूर्ति में स्थित होते हुए, आत्मसत्ता से मूर्ति का निरीक्षण करें। यह प्रतिलोम ध्यान है।

८. इस प्रकार प्रतिदिन मूर्ति का प्रतिलोमरूप से ध्यान करते हुए मूर्ति के दिव्य सुख के आनंद का अनुभव, ज्यों-ज्यों पात्रता बढती जाएगी त्यों-त्यों अधिकाधिक होगा।

९. जब तक श्रीहरि के स्वरूप के संग रोम-रोम रसरूप एकता न हो अर्थात् अनादिमुक्त की स्थिति का अनुभव सहज ही न हो, तब तक तनिक भी आकुल-व्याकुल हुए बिना पूर्ण उत्साह एवं आनंद से ध्यान करना चालु रखें।

ध्यान की किसी भी प्रक्रिया दौरान उकताना या उलझन का अनुभव न करें। मूर्ति के प्रताप से ध्यान में विघ्नकर्ता विचार-संकल्प धीरे-धीरे समूल दूर हो जाएंगे तथा अहर्निश मूर्ति के आनंद की प्राप्ति होगी।

१०. अनादिमुक्त की अलौकिक स्थिति की प्राप्ति के उपरांत नेत्र खुले हों वा बंद कोई फर्क नहीं पडता, क्योंकि उसके पश्चात् देह के अस्तित्व का संधान ही नहीं रहता। तत्पश्चात् श्रीजीमहाराज ही रहते हैं एवं चैतन्य दिव्य

साकार स्वरूप प्राप्तकर, सेवकभाव से मूर्ति में ओतप्रोत रहकर नवीन-नवीन सुख का अनुभव करता है।

इस प्रकार, समय की अनुकुलताकर प्रतिदिन शांत स्थल, स्थिर आसन से बैठकर, नियमित ध्यान करें। उसी प्रकार मानसी पूजा भी नित्य प्रतिलोमवृत्ति से मूर्ति में रहकर, चलते-फिरते, खाते-पीते, उठते-बैठते या अन्य प्रवृत्ति करते हुए ध्यान कर सकते हैं। जब तक ध्येय सिद्ध न हो तब तक ध्यान का अभ्यास सानंद चालु रखें।

(१०) **महाग्रंथो की पारायण :** हरेक परिवार इस वर्ष दौरान निम्नलिखित दो महाग्रंथो में से एक की पाँच पारायण श्रीहरि की मूर्ति की संलग्नता सहित समझदारीपूर्वक करें :

१. रहस्यार्थ प्रदीपिका टीका सह वचनामृत;

२. स. गु. मुनिस्वामी रचित 'शिक्षापत्री रहस्यार्थ'। वा निम्नलिखित पाँच ग्रंथो की एक-एक पारायण, कुल पाँच पारायण करें;

१. रहस्यार्थ वचनामृत;

२. शिक्षापत्री रहस्यार्थ;

३. बापाश्री की वार्ता भाग १-२;

४. श्री अबजीबापाश्री का जीवनचरित्र या जीवन वृत्तांत;

५. स. गु. ब्रह्मचारी श्री निर्गुणानंदजी कृत

'श्री पुरुषोत्तम लीलामृत सुखसागर'।
ऐसी पाँच पारायण की हो ऐसे परिवार बापाश्री के परम वरदान सदृश छत्री स्थान पर मनाये जाने वाले सार्ध शताब्दी महोत्सव दौरान उन पारायणों की पुरश्चरण विधि कार्यक्रम में बैठकर हिस्सा ले सकते हैं।

(११) **धून :** सर्वोपरि श्रीहरि के महामंत्र के नाम की धून आसपास के वातावरण को निर्मल, पवित्र एवं दिव्य बना देती है। अंतःशत्रुरूप त्रास उत्पन्न करनेवाले दोष का उस दिव्य ध्वनि के प्रबल प्रताप से शमन हो जाता है। इसके अतिरिक्त अवकाश में घूमती अशुभ वासनावाली प्रेतात्मा उस महामंत्र की झनकार से भयभीत होकर भाग जाती है; शुभ प्रेतात्मा उस दिव्य ध्वनि के श्रवण-स्पर्श से पावन होकर श्रीहरि के संकल्प से मोक्ष प्राप्त करती है। धून के दिव्य आंदोलन हवा में सर्वत्र प्रसरित होकर, जगत के मनुष्यों के पापों को भस्म कर, न्यून कर देते है; परिणाम स्वरूप विश्व में शांति प्रसरित होती है। धून की दिव्य शक्ति धून कर्ता के मनोरथ पूर्ण करती है। प्रभु प्राप्ति की अभिलाषा करते मुमुक्षुओं की पात्रता में वृद्धि करती है तथा ध्यान स्थिर वृत्ति से होने लगता है। अतः भिन्न-भिन्न ग्राम तथा शहर के विविध विस्तार में बारह, चौबीस, छत्तीस घंटे... की अखंड धून के कार्यक्रम की

योजना करते रहते हैं; वर्तमान में यह कार्यक्रम चालु ही है। धून का प्रारंभ श्री छत्री स्थान से संवत २०५० के कार्तिक शुकल एकादशी से प्रारंभ हुआ है एवं गाँव-गाँव, शहर-शहर में योजित होकर, सं २०५१ के कार्तिक शुकल एकादशी के दिन श्री छत्री स्थान पर ही समाप्त होगी। सार्ध शताब्दी महोत्सव समिति की ओर से उस समय १५० घंटे की धून के आयोजन के साथ वर्ष दौरान भिन्न-भिन्न स्थान पर हुई समस्त धून के कार्यक्रम का विधिवत् समापन होगा।

(१२) **सामूहिक सत्संग सभा :** प्रत्येक गाँव के तथा शहर के विभिन्न विस्तार में निवासित हरिभक्त मंदिर में या अन्य अनुकुल स्थान में माह में एक, दो या चार बार अर्थात् मासिक, पाक्षिक या साप्ताहिक अनुकुलतानुसार समूह में एकत्र होकर सत्संग सभा का आयोजन करें। सभा के कार्यक्रम में मंगलाचरण-प्रार्थना, श्लोक, कीर्तन, वचनामृत-बापाश्री की वार्ता, भक्तचिंतामणि आदि ग्रंथो का बारी-बारी से पठन कर उस पर विवेचन, विद्वान संत-हरिभक्तों के नियत किये हुए प्रवचन, समापन वक्तव्य, धून, ध्यान, थाल, आरती, प्रसादवितरण इत्यादि को समाविष्ट कर सकते हैं। इस प्रकार करीब दो से तीन घंटे का सुंदर कार्यक्रम रखें सत्संग सभा में

अधिकाधिक संख्या में हरिभक्त उपस्थित हों ऐसा संगीन आयोजन करें। सत्संग सभा के कारण संगठन एकता व परस्पर आत्मीयता होती है, इसके अतिरिक्त संत-हरिभक्तों के दर्शन-समागम-प्रवचन का अमूल्य लाभ प्राप्त होता है। सर्वाधिक विशेष महाराज की मूर्ति के संबंध का अपूर्व आनंद प्राप्त होता है।

(१३) धर्मदान : श्रीजीमहाराज की आज्ञानुसार धनाढ्य परिवार निज आय का दशांश तथा आर्थिक तौर पर दीन एवं मध्यम परिवार आय का बीसांश धर्मदान पूर्णतः ठाकुरजी क़ो अर्पण करें गृहस्थ हों वे दशांश-बीसांश निकाले यह कनिष्ठ धर्मदान है; बारह माह में एक माह महान मुक्त का समागम करें यह मध्यम धर्मदान है एवं श्रीजी की दिव्य मूर्ति में इंद्रियाँ, अंतःकरण तथा जीव एकाग्रकर संलग्न हो यह उत्तम धर्मदान है, बापाश्री के कथनानुसार सर्व गृहस्थ ये तीन प्रकार का धर्मदान करें, किंतु एक का भी त्याग न करें। हम सभी इसी प्रकार के वर्तन का निर्णय करें। जिससे श्रीजीमहाराज एवं बापाश्री की अनन्य प्रसन्नता प्राप्त हो। त्यागी वर्ग क्या कर सकता है? त्यागी की कोई वस्त्रादि से सेवा करे, उसे धर्मामृतानुसार रखे तथा उससे अधिक प्रतीत हो तो जिस मंदिर में निवास करते हों वहाँ ठाकुरजी के कोठार को अर्पित

कर दे तो त्यागी ने धन अर्पित किया कहा जाता है। त्यागी-गृही दोनों ही निज धर्मानुसार श्री ठाकुरजी को नियमित रूप से धन अर्पण करें।

(१४) अन्य महत्त्व के प्रकीर्ण मुद्दें : इस सार्ध शताब्दी वर्ष दौरान इतना विशेष तौर पर अवश्य ही करें कि -

(अ) हमस सब टी.वी. पर आते देश-विदेश के दैनिक समाचार तथा शैक्षणिक, वैज्ञानिक एवं धार्मिक कार्यक्रम के अतिरिक्त अन्य व्यर्थ कार्यक्रम को देखना वर्जित करें। इसके अतिरिक्त न देखने योग्य सिनेमा, नाटक, भवाई (नौटंकी), मेला, तमाशा आदि न देखें। बालक एवं किशोरों को यह बात आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक तरीके से समझ में आए ऐसी रीति से समझाने पर वे अवश्य ही समझेंगे व संमत होंगे।

(ब) नवरात्री के दिनों में घर के कोई भी सभ्य लौकिक गरबा-रास देखने-खेलने न जाते हुए उसके स्थान पर सर्व मिलकर 'मध्य में' श्रीहरिजी की मूर्ति बिराजमान कर प्रसंगोचित कीर्तन गान करवाकर गरबी-रास का आयोजन करें। जिससे श्रीहरि की प्रसन्नता की प्राप्ति होगी एवं रचनात्मक सात्विक प्रवृत्ति से सभी आनंदित हो सकेंगे।

(क) स्वयं के घर में श्रीजीमहाराज एवं उनके संत-मुक्तों के स्वरूप की प्रेरणादायक तस्वीरें तथा तीर्थस्थान, प्राकृतिक दृश्य, मंदिर, वैज्ञानिक खोज से संलग्नित कृतियाँ सुवाक्य के बोर्ड आदि दीवार पर सुशोभन के तौर पर या प्रेरणार्थ रखें तथा उनके आल्बम तैयार करें। असंस्कारी तस्वीरों को कदापि न टांगे वा न संचित करें।

इस महापर्व के उपलक्ष में हम सभी ऐसे कार्यक्रम अपनाकर कृतार्थ हों तथा हमारे संपर्क में आनेवाले व्यक्ति को उसकी पात्रता लक्ष में रखते हुए अनुसरण करने की प्रेरणा दे।

कविरत्न स. गु. ब्रह्मानंदस्वामी मानवजीवन के लक्ष्य बिंदु के लिये कहते हैं कि -

'मरना-मरना सभी कहे, मरी न जाने कोई;
मरना तो ऐसा मरना फिर जन्म न होई।'

इस ध्येय सिद्धि के हेतु परमकृपालु बापाश्री का कथन देखें :

'जीव को महाराज के सुख की पहचान नहीं और सत्संग में सेवा करने योग्य न करने योग्य ऐसे संत-हरिजन की पहचान नहीं है। समागम करने योग्य तथा सेवा करने योग्य ऐसे संत-हरिजन को पहचानकर, उनका समागमकर, श्रीजीमहाराज की मूर्ति में संलग्न हो जाए तो सुखी हो जाए। भगवान का सुख तो श्रीजीमहाराज तथा उनके अनादि मुक्त

द्वारा उनकी कृपा से ही प्राप्त होता है; केवल साधन के बल से प्राप्त नहीं होता, परंतु उस कृपा के अधिकारी बनने, पात्र होने का प्रयत्न तो स्वयं ही करना पडता है।'

अंततः श्रीजीमहाराज के अनादि मुक्तों के इन वचनों को जीवन में तथा व्यवहार में चरितार्थ करने का निष्ठापूर्वक पुरुषार्थ करें एवं उस पुरुषार्थ को सार्ध शताब्दी तक ही नहीं, परंतु सदैव समस्त जीवन का आनंदयोग बनायें। तथास्तु।

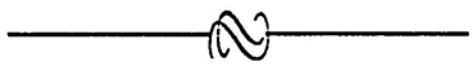

परिशिष्ट

बाह्य पूजाविधि

सूर्योदय से पूर्व उठकर श्री स्वामिनारायण भगवान तथा मुक्तों के नाम का उच्चारणकर, उनकी स्तुति-प्रार्थनाकर, उनका ध्यान करें, तत्पश्चात् बिछौने से उठकर प्रातः विधि करें। मलत्याग-शौचविधि के पश्चात् हाथ-पैर की समुचित शुद्धि करें। पश्चात् एक स्थान पर बैठकर, छने हुए जल से शुद्ध किया हुआ दतुवन करें, छने हुए जल से कुल्ला कर मुखशुद्धि करें। दतुवन करते हुए घूमना-फिरना बातें करना न करें। तत्पश्चात् शुद्ध जल से स्नान करें तथा उस समय भगवद्नाम का तथा तीर्थों के नाम का स्मरण करें। स्नान के पश्चात् धुले हुए वस्त्र पहनें। धोती पहनकर दुपट्टा या शाल ओढें। सुती धोती पहनने के पश्चात् पुनः धोकर पूजा में पहनें। रेशमी धोती धोये बिना पुनः पहन सकते हैं। मैले वस्त्र न पहनें। पूजा के हेतु शांत पवित्र स्थान पर पूर्णतः बैठ सकें ऐसे पवित्र आसन पर पूर्व या उत्तर मुख से बैठें। ये सर्व बाह्य शुद्धि के संग मन से भी पवित्र होकर प्रेमपूर्वक पूजा करें।

दाहिने हाथ की हथेली में शुद्ध-छना हुआ जल ग्रहण कर 'ॐ श्री स्वामिनारायण नमः' कहकर आचमन करें। पुनः हथेली में जल ग्रहणकर 'ॐ श्री हरिकृष्णाय नमः' कहकर आचमन करें। उसी प्रकार

तीसरी बार हथेली में जल ग्रहणकर 'ॐ श्री घनश्यामाय नमः' ऐसा नाममंत्र बोलकर आचमन करें। उपरांत पुरुष भाल, छाती, दोनों भुजा के बाहु इस प्रकार चार स्थान पर प्रसादी के चंदन से ऊर्ध्वपुंड्र तिलककर उसमें कुमकुम या चंदन का टीका करें। सुहागिन स्त्री भाल में मात्र टीका करें। तिलक-टीका करते समय 'स्वामिनारायण' महामंत्र बोलें। तत्पश्चात् मानसी पूजा करें। भाव से रोमांचित होकर गद्‌गद् कंठ से की गई मानसी पूजा की श्रीहरिने प्रशंसा की है। अतः भाव से पूजा करें।

तत्पश्चात् श्री स्वामिनारायण भगवान की चित्र प्रतिमा को उत्तम आसन पर बिराजमान करवा कर आवाहन करें।

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ हे नाथ! स्वामिनारायण! प्रभोः!।
धर्मसूनो दयासिंधो स्वेषां श्रेयः परं कुरु।।
आगच्छ भगवन्! देव! स्वस्थानात् परमेश्वर।
अहं पूजां करिष्यामि सदा त्वं संमुखो भव।।

यह आवाहनमंत्र प्रेमपूर्वक बोलकर आदर से नमस्कार करें। नैवेद्य-धूप-दीप-पूष्पादि अर्पण करें। पश्चात् मूर्ति संमुख दृष्टि रखकर 'स्वामिनारायण' महामंत्र का तथा ध. धु. आचार्य महाराजश्री के पास से लिये गये अष्टाक्षर दीक्षामंत्र का जप करें। जप की माला को गौमुखी के वस्त्र से ढाँककर एकाग्र चित्त से जप करें। तत्पश्चात् भगवान की प्रदक्षिणा करें। पुरुष साष्टांग दंडवत् तथा स्त्री पचांग प्रमाण करें।

भगवान की आदरपूर्वक स्तुति-प्रार्थना कर

स्वस्थानं गच्छ देवेश! पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकाम प्रसिद्धयर्थं पुनरागमनाय च।।

यह विसर्जनमंत्र बोलें। पश्चात् 'शिक्षापत्री' का पाठ करें।

इस प्रकार श्रीहरिजी की पूजा के बाद व्यवहारिक कार्य में जुटें।

मानसी पूजाविधि

श्री स्वामिनारायण भगवान में अतिशय स्नेह वृद्धि के हेतु मानसी पूजा उत्तम साधन होनें के कारण नियमित रूप से भावपूर्वक मानसी पूजा करें।

श्रीजीमहाराज की मानसी पूजा दिन में पाँच बार करें। पवित्र होकर, पवित्र आसन पर बैठकर श्रीहरिजी की महिमा सोचें। निजात्मा को तीन देह से भिन्न मानकर प्रतिलोमरूप से पुरुषोत्तमरूप की भावनाकर वा तेजरूप अक्षरधाम के संग एकता की भावनाकर स्वयं में बिराजमान श्रीहरिजी का ध्यान कर, मानसी पूजा करें।

१. सुबह पाँच से सात बजे के समय में **प्रथम मानसी पूजा** करें। योगनिद्रा से सुखशय्या में शयन करते हुए श्रीहरिजी की संत-हरिभक्त स्तुति-प्रार्थना करते हैं तब श्रीहरिजी जागृत होकर तकिये से टिकाकर बिराजमान होते हैं। उनके अंग-प्रत्यंग अतिशय शोभायमान हैं। श्रीहरिजी

नित्यविधि करने पधारते हैं। शौच कर आये श्रीहरिजी को जल एवं मृतिका से हस्तचरण की शुद्धि करवाकर दतुवन दें। सुगंधित जल से मुख प्रक्षालित करवायें सुंदर पाट पर बिराजितकर उनके अंग प्रत्यंग में इत्र-सुवासित द्रव्यों का मर्दनकर, जल से भावपूर्वक स्नान करवायें। तत्पश्चात् उत्तम वस्त्राभुषण ऋतुनुसार पहनाएँ। इत्र-केसर चंदन की अर्चना ललाट पर करें। सुगंधित पुष्प के हार, तुरे, गजरा, बाजुबंध धारण करवायें। धूप-दीप अर्पण करें। सक्कर-ईलायची-केसर-बादाम आदि डाला हुआ गर्म दूध पान के हेतु दें। दिव्य पकवान अल्पाहार के हेतु दें। उन्हें श्रीहरिजी ग्रहण करते हैं एवं मैं पंखा झेलता हूँ तथा सेवा करता हूँ ऐसे भाव से श्रीहरिजी की धारणा करें। भोजन के पश्चात् जलपान-मुखवासन करवाकर पलंग पर बिराजमान करवायें उस समय मुक्त प्रसादी ग्रहणकर श्रीहरिजी की चारोंओर बैठकर दर्शन करते हैं, श्रीहरिजी वार्ता-सुख प्रदान करते हैं। उस मूर्ति के दिव्य सुख का मैं अनुभव करता हूँ ऐसी भावना करें।

२. सुबह साडे दस से साडे ग्यारह बजे तक **दूसरी मानसी पूजा** करें। श्रीजीमहाराज दिव्य वस्त्राभुषणों को धारण कर दिव्य सिंहासन पर बिराजित हैं। भोजन का समय होने से श्रीहरिजी स्नानकर

पितांबर धारणकर, श्वेत वस्त्र ओढकर, सुशोभित पाट पर बिराजित हैं। स्वर्ण की थाली-कटोरी में श्रीहरिजी को विविध पकवान-नमकीन-सब्जी-दाल आदि दिव्य भोजन परोसकर प्रेमपूर्वक गद्‌गद् कंठ से आग्रहपूर्वक भोजन करवायें। सर्व मुक्त श्रीहरिजी के दर्शन करते हैं। श्रीजी भोजनकर तृप्त होकर सुगंधित जलपानकर मुखवासन लेकर पर्यंक पर बिराजते हैं। श्रीहरिजी के दर्शन, स्पर्शरूप प्रसाद लेकर श्रीहरिजी का ध्यान करें।

३. दोपहर को चार बजे के समय **तीसरी मानसी पूजा** करें। योगनिद्रा से दिव्य पर्यंक पर शयन करते श्रीजीमहाराज की चारों ओर मुक्त बैठकर दर्शन करते हैं। श्रीहरिजी जागृत होते ही मुक्तगण 'जय! जय!' बोलकर दर्शन करते हैं। श्रीजी की मूर्ति में से तेज एवं सुख के फव्वारे निकलते हैं। पश्चात् श्रीहरिजी को मैंने जल प्याला प्रदान किया उससे कुल्लाकर मुखशुद्धिकर श्रीहरिजी जलपान करते हैं। तत्पश्चात् ताजे-सुके मेवे तथा ऋतु अनुसार फल को अंगीकार करते हैं तथा सभी को प्रसाद प्रदान करते हैं। ऋतु अनुसार श्रीहरिजी घोडे पर सवार होकर नदी में स्नान हेतु या फूलबाडी में घूमने पधारते हैं। मुक्तगण संग हैं। श्रीहरिजी की अद्‌भुत लीला से सभी अहो! अहो! भाव पाते हैं। तदुपरांत श्रीजी की

चंदनपुष्प से पूजा करता हूँ तथा श्रीहरिजी के दिव्य सुख का अनुभव करते हुए उस स्वरूप में जम जाता हूँ, ऐसे भाव से धारणा करें।

४. संध्या आरती के पश्चात् **चौथी मानसी पूजा** करें। महाराजाधिराज श्रीजीमहाराज दिव्य शोभायुक्त दिव्यासन पर बिराजमान हैं। अनंत मुक्त हाजिर हैं। मैं श्रीहरिजी की आरती करंता हूँ; मुक्तगण दर्शन करते हैं। श्रीजी की मूर्ति में से अतिशय सुख के बिंब निकलते हैं। आरती के पश्चात् श्रीहरिजी सभी को छाती में चरणारविंद प्रदान करते हैं, मुझे भी प्रदानकर कृतकृत्य करते हैं तथा अति प्रसन्न होकर भेंटते हैं। पश्चात् श्रीहरिजी ब्यालू करने पाट पर बिराजते हैं। खीचडी-कढी-रोटी-सब्जी-दूध-घी वगैरह नैवेद्य रखेहुए दिव्य भोजन श्रीजी ग्रहण करते हैं। पश्चात् हस्त प्रक्षालन कर जलपान कर मुखवासन ग्रहण कर पर्यंक पर बिराजते हैं। सभी मुक्तगण श्रीजी के सुख में गुलतान हैं एवं मैं भी उसमें सुख प्राप्ति करता हूँ ऐसा अनुभव करें।

५. शयन आरती के पश्चात् **आखरी मानसी पूजा** करें। श्रीजीमहाराज सुंदर उबाला हुआ दूध, बादाम की पूरी, बेसन के लड्डु आदि ग्रहण कर जलपान करते हैं। तत्पश्चात् श्रीहरिजी बिछौना, तकिये तथा गाल के समीप रखने के तकिये सहित सुखशय्या में शयनकर योगनिद्रा

अंगीकार करते हैं। श्रीहरिजी मेरे हृदयाकाश में प्रेमरूप पर्यंक में शयनकर अक्षरधामरूप मेरी आत्मा में ही अखंड बिराजमान होते हैं, मैं उस मूर्ति में एकरूप होकर संलग्न हुआ हूँ वा समीप सेवा में रहकर पगचंपी करता हूँ ऐसी धारणा करें।

पाँचो बार की मानसी पूजा श्रीहरिजी की महिमापूर्वक प्रेम से एवं प्रत्यक्ष भाव से करें। यंत्रवत् या शुष्क मन द्वारा न करें। इस प्रकार प्रेमपूर्वक मानसी पूजा करनेवाले पर श्रीहरिजी अति प्रसन्न होते हैं।

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन का प्रतीक

प्रतीक में श्री स्वामिनारायण भगवान के चरण कमल में सामुद्रिक शास्त्र में वर्णन किये गये भगवत्स्वरूप के सोलह विलक्षण चिन्ह है:

*दाहिने चरण कमल में नौ चिन्हः

स्वस्तिक मांगल्यमय भगवत्स्वरूप को सूचित करता है।

अष्टकोण उत्तर-दक्षिण-पूरब-पश्चिम-अग्नि-ईशान-नैऋत्य-वायव्य आठों दिशा में भगवत्-करूणा बह रही है, इसका प्रतीक है।

ऊर्ध्वरेखा भगवत्कृपा से जीवों का अविरत ऊर्ध्वीकरण दर्शित करता है।

अंकुश सर्व को अंकुश में रखने, सर्व के कारण रूप ऐश्वर्य का प्रतीक है तथा अंतःशत्रु को बस में रखना सूचित करता है।

ध्वज ध्वज अथवा केतु सत्यस्वरूप भगवान की विजय पताका है ।

वज्र भगवत्स्वरूप का वज्र तुल्य शक्तिशाली बल जीवों के दोषों को नष्ट कर काल-कर्म-माया के भय से मुक्त करता है, यह निर्देश देता है।

पद्म जलकमलवत् निर्लेप करने वाले भगवत्स्वरूप की करूणामय मृदुता को सूचित करता है।

जांबुफल भगवत्स्वरूप में जो सम्मिलित है उनको प्राप्त दिव्य सुखरूप रस का प्रतीक है।

जव अग्नि में जव, तल आदि अनाज की आहुति देकर अहिसामय यज्ञ करने वाले एवं भगवत्स्वरूप में सम्मिलित है उनके धन-धान्य एवं योगक्षेम का भगवान स्वयं वहन करते है, यह सूचित करता है।

***बाये चरण कमल में सात चिन्हः**

मीन विपरित प्रवाह में बहकर उद्‌भव स्थान तक पहुँचती मीन की सदृश ऐश्वर्य-सुख के उद्‌भव स्थान भगवत्स्वरूप की प्राप्ति सूचित करता है।

त्रिकोण जीव को मनोव्यथा, व्याधि, आपत्ति से मुक्त करवा कर ईश्वर, माया, ब्रह्म की त्रिपुटी से पर परब्रह्म-स्वरूप में स्थित करने का निर्देशक है।

धनुष अधर्म से निज आश्रित का रक्षण करने का प्रतीक है।

गोपद भगवत्प्रिय गोवंश और भगवत्प्रिय सत्पुरूषों के परोपकारी लक्षण को सूचित करता है।

व्योम भगवत्स्वरूप के आकाशवत् निर्लेप भाव की सर्वत्र व्यापकता सूचित करता है।

अर्धचन्द्र भगवत्स्वरूप के घ्यान के द्वारा चँद्रकला की सदृश वृद्धि होकर पूर्णता को प्राप्त करता है, यह दर्शित करता है।

कलश भगवत्स्वरूप की सर्वोपरिता एवं परिपूर्णता का प्रतीक है।

प्रतीक में स्थित भगवत्स्वरूप के चिन्ह के रहस्य को दृष्टि समक्ष रखकर, सर्व जीव का हित हो ऐसी निःस्वार्थ ज्ञान-ध्यान-सेवा प्रवृत्ति सदैव करते-करवाते रहने के मिशन के पुरूषार्थ में भगवत्कृपा बरसती रहे, ऐसी श्री हरि के चरण कमल में प्रार्थना।

अनादिमुक्त की वाणी आत्मसात् कर
पात्र हो तो ध्यान सिद्ध होता है.

- पूज्यश्री नारायणभाई